ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-6* Issue-7* August- 2021
Innovation The Research Concept

जीवन और मृत्यु एक दार्शनिक दृष्टि

A Philosophical View of Life and Death

Paper Submission: 05/08/2021, Date of Acceptance: 15/08/2021, Date of Publication: 25/08/2021

बबीता शर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर
दर्शन शास्त्र विभाग
कन्या गुरुकुल परिसर,
हरिद्वार, उत्तराखंड, भारत

सारांश

जीवन और मृत्यु के सम्बन्ध में यह अत्यन्त सारगर्भित संक्षिप्त लेख है। जिसमें नास्तिक और आस्तिक दोनों दार्शनिकों की दृष्टि से विचार किया गया है। जीवन और मृत्यु मुख्य रुप से श्वास प्रश्वास की गति और उसके अवरोध का ही नाम है। जब तक नासिक रन्ध्र से श्वास गतागत कर रहा है तब तक यह अवस्था जीवन कहलाती है। और जब यह श्वास गति या प्राणसंचरण रुक जाता है तब यह अवस्था मृत्यु कहलाती है। किन्तु जीवन और मृत्यु का इतना ही स्वरुप नहीं है। इसके अतिरिक्त नास्तिक और आस्तिकों के मत कुछ अन्य बात कहते हैं। इस संदर्भ में चतुर्भूतवाद सूक्ष्म शरीर और सत् तत्त्व का विवेचन किया गया है।

This is a very succinct short article about life and death. In which both atheists and theists have been considered from the point of view of philosophers. Life and death are mainly the name of the movement of breathing and its obstruction. As long as the nose is breathing through the nostrils, this state is called life. And when this breathing movement or life-transmission stops, then this state is called death. But life and death are not the same form. Apart from this, the views of atheists and theists say something else. In this context, the Chaturbhuj Vada, the subtle body and the Sattva have been discussed.

मुख्य शब्दः व्युत्पत्ति - निर्वचन, गतागत- आना जाना, निष्पन्न -सिद्ध, विघटन - अलग अलग होना, वैषम्य -असमानता, अधिष्ठान, आधार, इन्द्रिय ग्राम - इन्द्रियों का समूह, नियति-नियम, यदृच्छा - अवसर, योनि -उत्पत्ति स्थान।

Key words: Etymology - Interpretation, Gatagata - Coming, Accomplished - Proven, Dissolution - Separation, Vaishya - Dissimilarity, Adhisthana, Basis, Indriya Grama - Group Of Senses, Destiny - Rule, Yamcha - Opportunity, Vagina - Place Of Origin.

प्रस्तावना

जीवन और मृत्यु एक शाश्वत अनवरत प्रवाह है। जीवन के पश्चात् मृत्यु और मृत्यु के पश्चात् फिर जीवन, यह क्रम अनादिकाल से चला आ रहा है। इसका आरम्भ कब हुआ कोई नहीं जानता। कोई जान भी नहीं सकता। बीज पहले कि वृक्ष पहले ? इस प्रश्न का एक ही उत्तर है कि यह परम्परा अनादि है। इसी प्रकार जीवन पहले कि मृत्यु पहले यह कोई नहीं जानता। इतना निश्चित है कि किसने जन्म लिया है, उसकी मृत्यु अवश्य होगी। गीता में कहा गया है कि -

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युध्रुव जन्म मृतस्य च।
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचिमतुमर्हसि ॥

गीता 2/271

भगवान कहते हैं कि हे अर्जुन! जे कुछ उत्पन्न हुआ है, उसकी मृत्यु निश्चित है। और जिसकी मृत्यु हो चुकी है उसका जन्म भी अवश्य होगा। यह एक अपरिहार्य सत्य है। इसलिए मृत सम्बन्धियों के लिए कुछ शोक करने की आवश्यकता नहीं है।

यहॉ एक स्वाभाविक प्रश्न उपस्थित होता है कि मृत्यु किसकी होती है और जन्म भी किसका होता है ? क्या मृत्यु आत्मा की होती है या शरीर की ? इसी प्रकार जन्म भी किसकाहोता है ? आत्मा का शरीर का ? आत्मा का जन्म और मृत्यु तो होता ही नही है। गीता में यही बात कही गयी है कि -

" न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं "। गीता - 2/202

वह तो अजर, अमर, अविनाशी, कूटस्थ, निष्क्रिय, सर्वव्यापक, नित्य, चैतन्य स्वरुप है। फिर तो शरीर का ही जन्म मानना पड़ेगा। यदि शरीर का जन्म होता है यह मानेंगे तब तो उसका नाश स्वाभाविक मानना पड़ेगा। फिर शोक कैसा और शरीर की हिंसा में पाप पुण्य कैसा ? इन सब प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने के लिए यहाँ कुछ चिन्तन अपेक्षित है।

जीवन और मृत्यु की परिभाषा

सबसे पहले यह जानने का प्रयास करते हैं कि जीवन और मृत्यु किसे कहते हैं ? " जीवन प्राणधारणे " धातु से जीवन शब्द निष्पन्न हुआ है। मृड् प्राण त्यागे धातु से मृत्यु शब्द की व्युत्पत्ति होती है। कर्मानुसार निश्चित आयु के साथ जब तक नासिक के छिद्र से श्वास प्रश्वास रुप प्राणवायु का संचार होता रहता है। तब तक उसको प्राणधारणा रुप जीवन नाम दिया जाता है और जब नासिका मार्ग से प्राण वायु का गमनागमन समाप्त हो जाता है। तब उस अवस्था को मृत्यु कहा जाता है। प्रकृति के कर्मो के अनुसार जीवों को कुछ निश्चित श्वासों की संख्या दी है। श्वासों के गमनागमन का यह नैरन्तर्य ही जीवन कहलाता है। इसी को आयु भी कहा जाता है। जब श्वासों की संख्या पूर्ण हो जाती है तब श्वास गति अवरुद्ध हो जाती है।

तब इस स्थिति को ही मृत्यु या परलोकगमन या पंचतत्व में लीनता कहा जाता है। अब यह प्रश्न पृथक से विचारणीय है कि मृत्यु का समय पूर्व निर्धारित है या आकस्मिक मृत्यु भी होती है यह भी विचारणीय प्रश्न है।

प्राण की श्रेष्ठता

जीवन में प्राणवायु का ही महत्व है। अन्य ज्ञानेन्दियाँ अथवा कर्मेन्द्रियों का नहीं। यद्यपि इन्द्रियों का भी जीवन के लिए अत्यन्त महत्व है किन्तु इनके रहने या न रहने से जीवन को कोई संकट नहीं है। जीवन का संकट तभी उपस्थित होता है। जब प्राणवायु इसके छोड़कर जाने के लिए उद्यत होता है। " छान्दोग्य उपनिषद " में कहा गया है कि जो साधक प्राण की इस श्रेष्ठता और ज्येष्ठता को जान लेता है वह जीवन में श्रेष्ठ और ज्येष्ठ हो जाता है।

यो ह वै ज्येष्ठं च श्रेष्ठं च वेद
ज्येष्ठश्च ह वै श्रेष्ठश्च भवति प्राणो वाव ज्येष्ठश्च

छान्दोग्य उननिषद - 5/1/1 3

वहीं छान्दोग्य उपनिषद में एक कथा आयी है कि - प्रजापति के पास जाकर समस्त इन्द्रियों के साथ प्राणों ने कहा - भगवान हम सब में श्रेष्ठ कौन है ? प्रजापति ने उत्तर दिया कि जिसके निकल जाने पर वह शरीर त्याज्य हो जाये वहीं सबसे बड़ा श्रेष्ठ है। प्रजापति की इस बात पर इन्द्रियों को विश्वास न हुआ। सबसे पहले वाणी शरीर से बाहर निकल गयी। किन्तु जीवन का फिर भी कुछ न बिगड़ा। बस बोलने की शक्ति चली गयी। यह देखकर वाणी पुनः शरीर में लौट आयी। इसी प्रकार बारी-बारी से सभी इन्दियां शरीर से बाहर गयी और यह परीक्षा की गई कि हमारे न रहने से यह जीवित रहेगा या नहीं ? किन्तु इन्द्रियों के निकल जाने पर भी शरीर जीवित ही कहलाता रहा मृत नहीं। इसी क्रम में जब प्राणवायु के निकलने का समय आया जो इन्द्रियां तड़पने लगीं। तब सबने प्राण से प्रार्थना की कि तुम न जाओ हम मान गये कि तुम ही हम में श्रेष्ठ और ज्येष्ठ हो।

' ते ह प्राणाः प्रजापति पिरमेत्योचु -
र्भगवनको नः श्रेष्ठ इति तानहोवाच यस्मिन्व व उत्क्रान्ते शरीरं पपिष्ठतरमिव दृश्यते स व श्रेष्ठः ॥

छान्दोग्य उपनिषद - 5/1/7 4

" भगवन्नेधि त्वं न श्रेष्ठोऽसि मोत्क्रमीरिति " ।

छान्दोग्य उपनिषद -5/1/12 5

इससे सिद्ध हुआ कि प्राण परित्याग से शरीर की मृत्यु होती है। और प्राण के रहते ही शरीर जीवित कहलाता है।

कुछ अन्य तथ्य

प्राण का रहना और प्राण का निकलना ही केवल जीवन और मृत्यु का लक्ष्य नहीं है। अपितु इस विषय में दर्शन शास्त्र में कुछ अन्य तथ्य भी विवेचित किये गये हैं, उन पर भी यहॉ विचार करना अपेक्षित होगा। इस विषय में नास्तिक और दार्शनिकों के विचार अलग-अलग हैं।

चार्वाक दर्शन कहता है कि यह चैतन्य पाँच भौतिक है पृथ्व्यादि चार भूतों के स्व मात्रा में मिलने से शरीर में एक शक्ति उत्पन्न होती है। यह शक्ति ही चैतन्य है। जब तक चैतन्य है तब तक जीवन है। इन पॉच तत्वों का विघटन ही मृत्यु है। -

तत्र पृथिव्यादीनि भूतानि चत्वारि तत्त्वानि ।
प्रथिवी जलं तथा तेजो वायुर्भूतचतुष्टयम् ॥
तेभ्य एव देहाकरपरिणतेभ्यः किण्वादिभ्यः।
मदशक्तिवत चैतनयमुयजायते ॥

सर्वदर्शन संग्रह, प्रथम अध्याय। 6

शरीर के अतिरिक्त जीव या जीवन नाम की कोई सत्ता सिद्ध नहीं होती है। मृत्यु के पश्चात् उस शरीर से सम्बन्ध रखने वाला कोई तत्त्व किसी लोक लोकान्तर या अन्य किसी रुप में अवशिष्ठ नहीं रहता जो शरीर द्वारा किये गये पाप या पुण्य का फल भोग करे। इसलिए इस शरीर से आनन्दपूर्वक जीवन बिताओ उनका प्रसिद्ध सिद्धान्त है -

यावज्जीवेत् सुखं जीवेत्
ऋण कृत्वा घृतं पिबेत।
भस्मीभूतस्य देहस्य
पुनरागमन कुतः ॥

सर्वदर्शन संग्रह प्रथम अध्याय

इस प्रकार नास्तिकों के मत में शरीर ही आत्मा है मृत्यु ही मोक्ष है। स्त्री के शरीर की कामतृप्ति ही पुरुषार्थ है। कष्टकादिजन्य दुख ही नरक है। आस्तिक विचारकों का मत इसके विपरीत है। उनकी मान्यता है कि केवल भूतों का मिलना और उनका विघटन ही जीवन और मृत्यु नहीं है। यदि केवल स्थूल महाभूतों के मिलने से ही जीवन कहा जाता तो सभी मनुष्य एक जैसे रुप, शरीर आयु और समान भोग वाले होने चाहिए थे। किन्तु हम देखते हैं कि संसार में अत्यन्त वैषम्य है। कोई सुन्दर है, कोई

कुरुप है, कोई धनवान है, कोई निर्धन है, कोई बहुत सुंखी है और कोई बहुत दुखी है।

इस विषमता से यह सिद्ध होता है कि पृथिवी आदि महाभूतों के अतिरिक्त कोई और भी तत्व है जो जीवन और मृत्यु का कारण है केवल प्राण के संसर्ग से ही जीव का निर्माण नहीं होता है। आचार्य विद्यारण्य कहते हैं कि चैतन्य का अधिष्ठान, लिङ् शरीर और चिदाभ्यास इन तीनों का सम्मिलित रुप ही जीव कहलाता है।

चैतन्यंयदधिष्ठानं लिंगदेहश्च यः पुनः चिच्छाया लिंगदेहस्था
तत्संधो जीवन उच्यते।
पंचदशी ॥8

अर्थात चैतन्य का अधिष्ठान भौतिक देह तथा लिंग शरीर जिसे सूक्ष्म शरीर भी कहा जाता है तथा इस सूक्ष्म शरीर में पड़ा हुआ चिदाभ्यास जीव कहलाता है। पंच ज्ञानेन्द्रिय, पंच प्राण तथा मन बुद्धि और अहंकार इन अठ्ठारह तत्वों का नाम ही लिंग देह या सूक्ष्म शरीर है। यह अठारह तत्वों वाला लिंगशरीर एक शरीर से दूसरे शरीर में गतागत करता रहता है। इस लिंग शरीर की मृत्यु नहीं होती है। इसका जन्म भी नहीं होता है। जब इस लिंग देह का सम्बन्ध स्थूल देह से होता है। तो इसे जन्म कहा जाता है। और इस लिंग शरीर का त्याग ही मृत्यु कहलाता है। गीता में भगवान ने जीवन और मृत्यु का यही स्वरुप बताया है।

वासासि जीर्णादि यथा विहाय।
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विद्वाय जीर्णा।
न्यन्यानि संयाति नवानि देही॥
गीता 2/22 9

अर्थात जिस प्रकार मनुष्य पुराने वस्त्रों का त्याग करके नये वस्त्रों को धारण करता है, उसी प्रकार यह देही आत्मा पुराने शरीरों को छोड़कर नये शरीर को धारण करता है। भाव यह है कि - पुरातन शरीर का त्याग ही मृत्यु है और नये शरीर को प्राप्त करना ही जीवन है। जीवन और मृत्यु इसके अतिरिक्त कुछ नहीं है। छन्दोग्य उपनिषद में कहा गया है कि -

सन्मूलाः सौम्येमाः सर्वाः प्रजाः
सदायतना सत्प्रतिष्ठाः । 6/8/4 10

अर्थात संसार का मूल तत्त्व सत है। सत ही इसका अधिष्ठान है और यह सब प्रजा सत् तत्त्व में ही प्रतिष्ठित है। कहने का भाव यह है कि इस शरीर से भिन्न, प्राण से भी भिन्न, शरीर से भी भिन्न तथा इन्द्रिय समूह से भी भिन्न एक तत्त्व है। जिसका नाम सत या आत्मा है। यही तत्व एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीरों में संक्रमण करता है। जीवन और मृत्यु उसी तत्त्व की गतियां हैं।

अब यहॉ यह प्रश्न उपस्थित होता है कि वह सत् तत्व जिसे आत्मा या ब्रह्म कहा जाता है वह पुरुष और स्त्री के शुक्र और शोणित में कैसे पहुँचा ? प्राण शरीर और इन्द्रिय ग्राम का यह संघ स्त्री और पुरुष के देह में कैसे पहुँचा ? यह प्रश्न श्वेताश्वतरोपनिषद् में उठाया गया है कि -

किं कारणं ब्रह्म कुतः स्म जाता
जीवाम केन क्व च सम्प्रतिष्ठाः ॥
अधिष्ठिता केन सुखेतरेषु ।
वर्तामहे ब्रह्मविदो व्यवस्थाम्॥
श्वेताश्वतरोपनिषद 1/1 11

फिर इस प्रश्न का उत्तर भी वहॉ दिया गया है -

कालः स्वभावो नियतियर्दृच्छा
भूतानि योनिः पुरुष इति चिन्त्याः ।
संयोग एषां न त्वात्मभावा
दात्माप्यनीशः सुख दुःख हेतोः ॥
श्वेताश्वतरोपनिषद् 1/2 12

अर्थात काल, स्वभाव, नियति चदृच्छा, महाभूत प्रकृति योनि और पुरुष ये सब यद्यपि जन्म के कारण हैं किन्तु अकेले अकेले यह कुछ नहीं कर सकते । ये सब मिलकर शरीर को जन्म देते हैं। जैसे अंकुर के प्रति अकेला बीज यह केवल कृषि भूमि या कृषक कारण नहीं है। बीज भूमि कृषक जल, वायु, धूप आदि सभी तत्व समुद्रित होकर अंकुर को जन्म देते हैं। उसी प्रकार यह सूक्ष्म शरीर खाये हुए अनादि शुक्र शोणित केरुप में परिवर्तित होकर योनि तक पहुॅचते हैं। और विभिन्न शरीरों को जन्म देते हैं। ये सूक्ष्म देह मेघों के जल के साथ पृथ्वी पर बरसते हैं। और अन्न, तृण, लता, पुष्प, फल आदि पर गिर पड़ते हैं। प्राणी उन अन्नादि का सेवन करते हैं जिससे शुक्र शोषित के अन्दर बीज का रुप धारण करके सम्भोग द्वारा स्त्री की योनि में पहुॅचते हैं। और विभिन्न प्रणाओं को जन्म देते हैं। समय आने पर मृत्यु को प्राप्त होते हैं। और पुनः जन्म लेते हैं। यह चक्र अनवरत चलता रहता है और तब तक चलता है जब तक आत्मा की मुक्ति नहीं हो जाती है।

मृत्यु को प्राप्त हुये मनुष्यों की परलोक गमन की तीन गतिविधियां बतायी गयी हैं धूम मार्ग, अर्चिमार्ग और गतागत मार्ग। जिन मनुष्यों ने दान अग्निहोत्र आदि शुभ कर्म किये हैं वे धूम मार्ग से जाते हैं ऐसे लोग धूम बनकर मेघ बनकर चन्द्रलोक जाते हैं। चन्द्रलोक से स्वर्गादि लोक में जाकर पुण्यों के फलस्वरुप सुख-दुख आदि का भोग निश्चित अवधि तक करते हैं। उसके पश्चात पुण्यों का क्षय हो जाने पर पुनः मत्र्यलोक में लौट आते हैं। यही बात गीता में कही गई है -

ते तं भुक्त्वा स्वर्गलांकं विशाल
क्षीणे पुण्ये मत्र्यलोकं विशन्ति ॥
गीता- 9/2113

जिन मुनष्यों ने अरण्य में जाकर तप और श्रद्धा के साथ वैराग्य पूर्वक प्रणव जप आदि योग साधन करते हुए भैक्षचर्या का आचरण किया है वे चन्द्रलोक से सूर्यलोक में जाते हैं। और वहॉ से तप सत्यादि लोकों का भेदन करते हुए ब्रह्म लोक में प्रवेश करते हैं। जहॉ से इनका धराधाम पर पुनरागमन नहीं होता है।

तपःश्रद्धे ये ह्युपवसन्त्यरण्ये ।
शान्ता विद्वान्सौ भैक्ष्यचर्यां चरन्तः ॥
सूर्यद्वारेण ते विरजाः प्रयन्ति।

यत्रामृतः सब पुरुषो ह्यव्ययात्मा॥

मुण्डक 1/2/11 14

तीसरी गति मिश्रित कर्मवाले मनुष्यों की होती है। जिन्होंने पाप व पुण्य दोनों प्रकार के कर्म किये होते हैं। इसी लोक में बार-बार जन्म लेते हैं और मरते रहते हैं।

गतागतं कामकामा लभन्ते।

गीता 9/21 15

अध्ययन का उद्देश्य

इस शोध का उद्देश्य जीवन और मृत्यु मुख्य रुप से श्वास प्रश्वास की गति और उसके अवरोध का ही नाम है।

निष्कर्ष

इस प्रकार शास्त्रों में जीवन और मरण का विस्तार से विवेचन हुआ है। जिसका सर्वांग विवेचन इस लघुकाम लेख में सम्भव नहीं है। कर्मों के अनुसार ही निश्चित अवधि तक देह में प्रवेश होता है और पुनः मृत्यु की प्राप्ति होती है। जब तक यह कर्मो की परम्परा का नाश नहीं होता है यह जीवन मरण का चक्र अनवरत चलता रहता है। कर्म का चक्र समाप्त होते ही जीवन और मृत्यु का चक्र भी सदा-सदा के लिए समाप्त हो जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय 2/ श्लोक 27*
2. *श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय 2/श्लोक 27*
3. *छान्दोग्य उपनिषद्, 5/1/1*
4. *छान्दोग्य उपनिषद् 5/1/7*
5. *छान्दोग्य उपनिषद् 5/1/12*
6. *सर्वदर्शन संग्रह प्रथम अध्याय*
7. *सर्वदर्शन संग्रह, प्रथम अध्याय*
8. *पंचदशी*
9. *श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 2/श्लोक 22*
10. *1छान्दोग्य उपनिषद 6/8/4*
11. *श्वेताश्वतरोपनिषद 1/1*
12. *1ताश्वतरोपनिषद 1/2*
13. *श्रीमदभगवद्गीता 9/21*
14. *1मुण्डक उपनिषद 1/2/11*
15. *श्रीमद्भगवद्गीता 9/21*